बरमा में लिखी गयीं
मेरी कविताएं
आचार्य सत्यनारायण गोयन्का

© विपश्यना विशोधन विन्यास
सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण : जुलाई २०१३

ISBN: 978-81-7414-355-6

प्रकाशकः
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३
जिला- नाशिक, महाराष्ट्र
फोनः ०२५५३-२४४९९८, २४४०७६, २४४०८६,
२४४१४४, २४४४४०; फैक्सः ९१-२५५३-२४४१७६
Email: vri_admin@dhamma.net.in
info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org

मुद्रकः
अपोलो प्रिंटिंग प्रेस
जी-२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी.,
सातपुर, नाशिक-४२२००७, महाराष्ट्र

भाषा अनगढ़ है,
भाव अटपटे हैं,
अभिव्यंजना विशृंखल है।

घने बादलों की तरह,
भावना से हृदय भर आया,
झुक गया-
और चाहा-
कि बरस लूं,
और बरस पड़ा,
बस - और तो विशेष कुछ नहीं।

- स.ना.गो. (पतित)

विषयानुक्रमणिका

६ प्राक्कथन

साहित्यिक कविताएं

२३ बसंत
२५ मानवता
२६ आहों ने कब माना बंधन?
२८ राका
३१ मैं कविता लिखनी क्या जानूं?
३८ एक अनुवाद
३९ दुःख है
४३ श्रद्धा-बल
४६ उत्तम मंगल
४८ विदाई
४९ प्रवासी के प्रति
५० मीना बाजार
५५ पन्ना धाय
६० गीत (जब तू मिली)
६२ कहूं किससे? कौन सुनता?

देशप्रेम

६५ तुम उनकी आहें क्या जानो?
६८ कब खोलूं मैं मां के बंधन?
७१ जयति! जयति! भारती!!
७२ उद्‌बोधन
७४ आजादी का महापर्व
८० मेरे मरुधर देश जाग!
८२ हिंदुस्तानी
८८ यह कैसा पाकिस्तान हुआ!
९० खूनां री होली (राजस्थानी धमाल गीत)
९२ भारत म्हांरो रे (राजस्थानी धमाल गीत)
९३ भारत एक है (राजस्थानी धमाल गीत)

राजनेता

९७ भारत भूमा के भव्य भानु (महात्मा गांधी)
९८ नेताजी की अमर कहानी
१०१ नेताजी सुभाषचंद्र बोस का स्मरण
१०४ सरदार वल्लभ भाई पटेल (राजस्थानी)
१०६ बहादुर शाह ज़फर
१०८ जै जवाहरलाल की
११३ राष्ट्रपति राजेंद्रप्रसाद के प्रति

बरमा (जन्म-भूमि की कविताएं)

११९ बरमा (जन्म-भूमि प्रेम)
१२२ ऐरावदी
१२५ बिरमा प्यारो रे (राजस्थानी धमाल गीत)
१२७ तडिंजु (राजस्थानी धमाल गीत)
१२९ तिंज्यां (राजस्थानी धमाल गीत)

सामाजिक कविताएं

१३३ मां दुर्गा
१३७ कैसे कह दूं क्या क्या देखा!

दीपावली की कविताएं

१४३ आई आज दीवाली री
१४८ नव भारत की नव दीवाली
१५० कैसे दीपावली मनाएं?

प्रसिद्ध राजस्थानी कविताओं का अनुवाद

१५३ पृथ्वी-प्रताप
१५९ माता की लोरी
१६१ यादगार (मुंडमाल)

पारिवारिक कविताएं

१६७ प्रिय शंकर के विवाहोपलक्ष में शुभाशीः
१६९ डोली
१७२ लाडली बहू सुधा के स्वागत में
१७४ ताई की स्मृति में
१७६ क्या फिर खोया प्यार मिलेगा?

१७८ बरमी शब्द और उनके अर्थ
१७९ विपश्यना साहित्य
१८२ विपश्यना केंद्र

श्री सत्यनारायणजी गोयन्का का जन्म दिन रविवार, माघ शुक्ल द्वादसी (विश्वकर्मा दिवस), विक्रम संवत १९८०, तद्नुसार १७ फरवरी, सन १९२४ को बरमा के मांडले शहर के एक धर्मभीरु कट्टर सनातनी परिवार में हुआ। बचपन से ही घर में पूजा-पाठ का माहौल देखा था। वे स्वयं सात्त्विक प्रकृति के थे और नित्य नियमित सजल नेत्रों से पूजा-पाठ में तल्लीन रहते थे।

चूरू की हवेली

पैतृक निवास चूरू (राजस्थान) में हवेली का निर्माणकार्य करवाने के लिए इनके ताऊजी श्री द्वारकादासजी चूरू आये और अपने साथ बालक श्री सत्यनारायण को भी ले आये। वहां आकर ये अपनी बुआ के साथ रहने लगे। यानी बचपन के दो वर्ष चूरू नगर में बीते। यों खेल-खेल में निर्माणकार्य में योग देने का भी इन्हें अनुभव हुआ। क्योंकि जब मजदूर काम करते होते तब ये भी उसमें जुट जाते और बाल-सुलभ अपने हाथ से उठ सकने योग्य कोई ईंट-पत्थर उठा कर उन्हें देते और कहते कि लो इसे भी लगाओ... इत्यादि।

इस प्रकार इनकी प्रारंभिक शिक्षा चूरू के एक प्राथमिक विद्यालय से आरंभ हुई। इन्होंने वहां का एक मर्म स्पर्शी स्वानुभव सुनाया –

गुरुओं के प्रति निष्ठाभाव

चूरू की पाठशाला में हिंदी की वर्णमाला, बारहखड़ी, गिनती और पहाड़ों का विद्यादान देने वाले गुरु – **कासूजी** काने थे। कुछ बच्चे उनकी हँसी उड़ाते और अपशब्द कहते–

'कासू काणो, छोरा नै पढ़ाणो।'

कासू गुरुजी का एक तकियाकलाम था– वह हर बात में 'हाऊ' बोलते थे। इसलिए बच्चों ने कहना शुरू किया–

'कासू बोलै हाऊ, मैं कासू को ताऊ।'

इनके बालसुलभ मानस में भी ये शब्द पैठ गये और घर पर इनके मुँह से यूं ही निकल गये। इनकी बुआ ने सुना तो वह बहुत नाराज हुई और इनका कान पकड़ कर बोलीं–

"जो तुम्हें विद्या का दान देता है वह पूज्य और सम्मान का पात्र होता है। किसी गुरु के प्रति कभी ऐसे अपशब्द नहीं कहने चाहिए।"
बुआ की इस प्रताड़ना से कासू गुरु ही नहीं, सभी गुरुओं के प्रति इनके मन में आस्था का भाव जागा और इन्होंने बुआ की यह बात गांठ बांध ली और फिर दुबारा इनके मुँह से ऐसे शब्द कभी नहीं निकले।

कुछ समय पश्चात कासू गुरुजी का देहांत हो गया। बच्चों ने फिर कहना आरंभ किया–

'कालीजी के मंदिर की धोळी ध्वजा। कासू मरग्यो खूब मजा।।'

परंतु इनके मुँह से ऐसे शब्द दुबारा नहीं निकले। यह जान-समझ कर इनकी बुआजी बहुत प्रसन्न हुईं।

प्रथम शिक्षा प्रदायिनी उस धर्ममयी गुरुमाता बुआ की प्रताड़ना और कासू गुरुजी तथा अन्य गुरुओं की कृपा का ही फल था कि ये हर कक्षा में प्रथम आते रहे। इनके सभी गुरु इनके ऊपर विशेष रूप से प्रसन्न रहे। बुआ मां को ये जब-जब याद करते हैं, इनके मन में प्रणाम के ही भाव जागते हैं। गुरुओं के प्रति उन्होंने जो सम्मान का पाठ पढ़ाया था, उसे ये जीवन भर नहीं भूल सके। किसी गुरु के प्रति अपशब्द कहना तो दूर, मन में बुरे भाव तक नहीं जागे। इनका यह प्रण जीवन भर चला कि – 'किसी गुरु की निंदा स्वप्न में भी नहीं करनी।'

बरमा वापस लौटे

दो वर्ष तक चूरू की पाठशाला में कासू गुरुजी के अंतर्गत शिक्षा प्राप्त की। परंतु सबसे बड़ी शिक्षा तो इनकी बुआ की ही थी। उन्होंने पूज्य गुरुओं के प्रति पहला पाठ जो पढ़ाया था। इधर हवेली का भी काम पूरा हो चुका था। अतः ताऊजी के साथ ही बरमा वापस लौट गये और पहली कक्षा की पढ़ाई के लिए वहां की मारवाड़ी पाठशाला में भरती हुए। वहां गुरुजी श्री कल्याणदत्तजी दूबे भी बहुत अच्छे और पूज्य थे। दो वर्ष तक उनके सान्निध्य में पढ़ने के बाद इन्हें हिंदी की अच्छी खासी जानकारी हो गयी।

मांडले शहर के बाहर एक गऊशाला थी। हर वर्ष गोपाष्टमी पर वहां एक मेला लगता, जिसमें नगर के विद्वानों के भाषण होते। इसमें गो-भक्तों की बहुत बड़ी मंडली इकट्ठा होती थी। इनके गुरुदेव श्री दूबेजी ने कहा कि उस मंडली के सामने ये भी एक भाषण दें तो उसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। इसके लिए श्री दूबेजी ने चार पन्ने का एक भाषण लिख दिया। इन्होंने उसे अपने बाबाजी को दिखाया तब उन्होंने कहा, 'पढ़ कर सुनाओगे तो क्या बहादुरी है। इसे रट लो तो बहुत प्रशंसनीय होगा।' पांच दिन का समय था। इन्होंने चारों पन्ने रट लिये और

गोपाष्टमी की सभा में अपना भाषण कंठस्थ करके सुनाया। लोग चकित हो गये। मास्टरजी भी बहुत प्रसन्न हुए। मारवाड़ी स्कूल की पहली कक्षा के विद्यार्थी के लिए यह सचमुच बहुत बड़ी बात थी।

पाठशाला में अलग-अलग कमरे नहीं थे। अतः दोनों कक्षाएं पास-पास खुले में ही लगती थीं। इनके बड़े भाई श्री बाबूलालजी दूसरी कक्षा में पढ़ते थे। उसमें मास्टरजी श्री मैथिलीशरण गुप्त की कविता **भारत-भारती** का पाठ पढ़ाते। वह पाठ इन्हें बहुत प्रिय लगता। जब वे कहते –

मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती।
भगवान! भारतवर्ष में गूंजे हमारी भारती।।
वह भद्रभावोद्भाविनी, वह भारती हे भगवते!
सीतापते सीतापते! गीतामते गीतामते!!

ऐसे गीतों को शीघ्र ही रट लेने में इन्हें बहुत आनंद आता था। मास्टरजी को विद्यार्थियों से नाटक करवाने का भी बड़ा शौक था। इन्हें ऐसे राजा के राजकुमार का पार्ट दिया, जिसकी राज्यसत्ता समाप्त होने पर वह कंगाल हो गया और एक भिखारी की तरह अपने राज्य से बाहर निकल कर गांव की ओर चल पड़ा। इन्हें गांवों का कभी कोई अभ्यास नहीं था। फिर भी बड़ी तत्परता से गांव का जीवन अपनाया और इनके मुँह से गीत गवाया गया, उसके बोल थे–

'करमगति टारत नाहिं टरी।' .... इसे लोगों ने बहुत सराहा। इस नाटक से स्वयं इन्हें जीवन के ऐसे उतार-चढ़ाओं को झेलने की जो प्रेरणा मिली, वह जीवन भर काम आयी।

कविता-पाठ और नाटकों की प्रवृत्ति बढ़ती गयी और इन्होंने अनेक नाटकों में भाग लिया।

मारवाड़ी स्कूल में दो वर्ष तक पढ़ने के बाद ३री कक्षा की पढ़ाई के लिए खालसा स्कूल में भरती हुए। वहां भी दो-तीन नाटकों में भाग लिया और प्रशंसा के पात्र बने। आखिरी दिनों में इन्होंने 'सम्राट अशोक' का पार्ट किया, जिसे देखने के लिए देश का प्रधानमंत्री ऊ नू आया और उसने लोगों के सामने इनकी प्रशंसा के दो शब्द भी कहे। इस स्कूल के सभी अध्यापक सरदार थे। वे बहुत भले थे। सभी एक से बढ़ कर एक। प्रमुख अध्यापक (हेडमास्टर) का तो कहना ही क्या। सफेद लंबी दाढ़ी के कारण वे देखने में बहुत भव्य लगते थे। परंतु एक घटना ऐसी घटी जिससे थोड़ी कड़वाहट आ गयी। स्कूल का नियम था कि कोई बच्चा होली खेल कर स्कूल में न आये। परंतु होली का दिन था इसलिए रास्ते में एक दुष्ट बच्चे ने और कुछ नहीं तो इनके ऊपर फाउंटेन पेन की स्याही छिड़क दी। ये स्कूल गये तो मास्टर जी बहुत नाराज हुए। जो होली से रंगे कपड़े पहन कर आये थे उन्हें बांस की बेंत से पीटा। इनकी भी बारी आयी। यद्यपि जानते थे कि इसमें इनका कोई कसूर नहीं था। लेकिन क्या करते? बांस का एक डंडा इन्हें भी लगा। इसका दुःख हुआ। दूसरे दिन जब मास्टरजी को इसकी सच्चाई बतायी और कहा कि उनके प्रति मन में जो दुर्भावना आयी, उसके लिए माफी चाहते हैं। यह सुन कर हेडमास्टरजी बहुत प्रसन्न हुए और इनके प्रति उनका स्नेह पहले से भी अधिक बढ़ गया। यह 'गुरुओं के प्रति निष्ठा' का ही फल था। ऐसे समय कासू गुरुजी और इनकी बुआ की इन्हें बहुत याद आयी।

कासू गुरुजी ने इन्हें एक, डेढ़ के बाद ढाई और साढ़े तीन गुणा के पहाड़ों की जो रट सिखा दी थी, वह इनकी सारी शिक्षा में बहुत काम आयी। इसी के कारण सातवीं परीक्षा में इन्हें डबल प्रमोशन मिला, यानी, आठवीं कक्षा की पढ़ाई किये बिना ही इनका नाम नौवीं कक्षा

में लिखा गया। तिस पर भी नौवीं में और फिर बोर्ड की सरकारी परीक्षा दसवीं में भी हिंदी एवं गणित में इन्होंने डिस्टिंक्सन प्राप्त किया। दसवीं में पूरे बरमा में प्रथम आये। सरकार की ओर से सारी सुविधा प्रदान की गयी और वजीफा मिलने पर भी पारिवारिक एवं सामाजिक कारणों से ये मैट्रिक से आगे की पढ़ाई नहीं कर पाये। परिवार वालों के लिए मैट्रिक की पढ़ाई भी बहुत है। एक व्यापारी को इससे अधिक पढ़ कर और क्या करना? कोई नौकरी तो करनी नहीं। उन्होंने कहा- "अब काम-धंधे में लग जाओ और उसके गुर सीखो।"

पुस्तकें पढ़ने का शौक

नई-नई पुस्तकें पढ़ने का शौक इन्हें बचपन से ही था। इनके पिताजी ने इन्हें किताबें खरीदने की पूरी सहूलियत दे रखी थी। इस बीच एक घटना घटी। देश के सुप्रीम कोर्ट के जज श्री जीजीभाई के प्रयास से ७वीं कक्षा में सरकार की ओर से फर्स्ट-एड (First-Aid) का पाठ पढ़ाया गया। इस विषय पर जो पुस्तक पढ़ने के लिए दी गयी थी, ये उससे भी बड़ी पुस्तक बाजार से खरीद लाये। इसे देख कर परीक्षक डॉक्टर बहुत प्रसन्न हुआ। इन्होंने परीक्षा में उसके हर प्रश्न का पूरे से भी अधिक और सही उत्तर दिया और पूरे बरमा में प्रथम आये। डॉक्टर ने अपने रिमार्क में लिखा कि यह लड़का हर विषय में सबसे अधिक तेज है। उसके कहने पर बरमा के तत्कालीन ब्रिटिश गवर्नर मि. क्रोक्रीन ने एक बड़ी सभा में इन्हें स्वर्ण-पदक (Gold Medal) प्रदान किया। इस सब के पीछे इनकी बुआ की प्रथम शिक्षा ही बलदायी रही।

पैतृक योगदान

श्री गोयन्काजी के पितामह श्री बसेसरलालजी व्यापार-धंधे की खोज में चूरू से मांडले (बरमा) आ बसे थे और कपड़े के व्यापार में लग गये थे। कपड़ों के गट्ठर बांध कर, घोड़ों पर लाद कर, जगह-जगह गांव तथा बनखंडों की मंडियों में जाकर बेचते और कई दिनों के बाद ही घर वापस लौटते थे।

धीरे-धीरे व्यापार बढ़ा, दूकानें खुलीं और उनके बच्चे अर्थात पूज्य गुरुदेव के पिता और चाचा-ताऊ दूकानों में बैठ कर कपड़े का व्यापार करने लगे। जापान और इंगलैंड से फैंसी कपड़ों का आयात करते तथा भारत से लुंगी, मलमल, धोती आदि का। तब सारा व्यापार जमीन के रास्ते बैलगाड़ियों से या पानी के जहाज से होता था।

अब किशोरावस्था में ही ये भी काम-धंधे में लग गये। व्यापार को आगे बढ़ाया और नए-नए उद्योगों की स्थापना की। जापान में कार्यालय खोला। जर्मन मशीनरी का आयात करके पहली बार कंबल बनाने का उद्योग लगाया और फिर जर्मन तकनीक की अन्य मशीनों का आयात करके चावल की कणी से तैल निकालने का प्लांट लगाया- जिसे राइस ब्रान ऑयल कहते हैं। इस तैल से बनने वाले प्रोडक्ट जैसे ग्लिसरीन और फैटीएसिड बनाने के भी प्लांट लगाये और उनका बिस्तार दक्षिणी भारत तक किया।

पूज्या माताजी

पूज्या माताजी श्रीमती इलायचीदेवी गोयन्का का जन्म भी मांडले के ही एक अन्य मारवाड़ी परिवार में दिन मंगलवार, माघ शुक्ल वसंत पंचमी, संवत १९८६, तद्नुसार

४ फरवरी, १९३० को हुआ। १२ वर्ष की कच्ची उम्र में ही परिवार वालों ने इनका विवाह श्री सत्यनारायणजी से करवा दिया। इस शुभ महूर्त का दिन था बुधवार, २१ जनवरी, १९४२। यह भी शुक्ल पक्ष की वसंत पंचमी, संवत १९९८ था जब इनका विवाह-संस्कार संपन्न हुआ। संयोग से विवाह के कुछ दिनों पश्चात ही जापान ने बरमा पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेजों से युद्ध आरंभ हो गया, गंभीर बमबारी हुई और परिवार के अनेक सदस्य बरमा छोड़ कर पहाड़ियों के रास्ते पैदल ही भारत की ओर चल पड़े। कठिनाइयां झेलते हुए ये लोग पहाड़ियां पार करके भारत के मैदानी क्षेत्र में पहुँचे तब रेल की यात्रा करके चूरू (राजस्थान) पहुँचे। कुछ समय तक ये लोग चूरू के अपने पैतृक निवास में रहे। माताजी अपने मां-बापू के साथ राजस्थान के सुलताना गांव चली गयीं थीं। लगभग पांच वर्ष बाद सब लोग जब बरमा वापस लौटे तब माताजी अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों में लग गयीं और उसे बखूबी निभाया।

चूरू का साहित्यिक जीवन

बरमा से चूरू पहुँचते ही परिवार के सभी सदस्य बीमार पड़ गये थे। केवल श्री सत्यनारायणजी और इनकी भाभी (श्री बाबूलालजी की पत्नी) स्वस्थ थे। इन दोनों ने अन्य लोगों की सेवा-सुश्रूषा की। लगभग दो वर्ष तक ये वहीं रहे। इस दौरान श्री गोयन्काजी ने हिंदी की अनेक पुस्तकें मँगवाई और उनका अध्ययन करते हुए कविताएं लिखने का अपना शौक पूरा किया। इस प्रकार स्थानीय कवि-गोष्ठियों में भी भाग लेते रहे और वहां रहते हुए कुछ नाटकों का मंचन भी किया।

दुबारा बरमा लौटे

तत्पश्चात लगभग २-३ वर्ष के लिए श्री गोयन्काजी दक्षिण भारत के कन्नानोर (केरल) गये और वहां नया काम-धंधा आरंभ किया। बरमा में महायुद्ध के समाप्त होने पर जब अंग्रेजों का वर्चस्व फिर से कायम हुआ, तब फिर ये सब लोग सपरिवार बरमा वापस लौटे और पहले की तरह ही काम-धंधे में लग गये।

कवि और लेखक

बचपन से ही श्री गोयन्काजी को कविता लिखने का बड़ा शौक था। बरमा रहते हुए इन्होंने कई विषयों पर कविताएं लिखीं, वहां के आयोजनों में कविता-पाठ किया और खूब नाम कमाया। इनकी कविताओं के प्रमुख विषय थे – साहित्यिक विवेचन, सामाजिक क्रांति, स्वदेश-प्रेम, जन्मभूमि म्यंमा, प्रमुख राजनेता, राजस्थान की धरती और वहां के शूरवीर, त्यौहार और उनकी विशेषताएं, राजस्थानी धमालें, पारिवारिक परिवेश आदि। इनमें से कुछ कविताएं बरमा में छपीं और कुछ आंशिक रूप से भारत की पत्र-पत्रिकाओं में। अब उन कविताओं का यह संग्रह पुस्तकाकार आप के हाथ में है। अधिकांश कविताएं विपश्यना में आने के पूर्व की लिखी हुई हैं।

यहां इन कविताओं के कुछ नमूने दिये जा रहे हैं, जो कि इसी पुस्तक में विस्तार से छपी हैं –

मानवता के प्रति

शारद रूठे या श्री रूठे, रूठे चाहे सब संसार।
पर मानवते! रूठ न जाना, तू ना बन जाना अनुदार।।

एक अनुवाद (जीवन जगत की सच्चाई)

कितने मधुमय बन जाते हैं स्वतः रैन दिन।
जब सुंदर संगीत सदृश बहता हो जीवन।।
पर मानव तो धन्य वही, जिसके होठों पर मृदु नर्तन।
जदपि क्रूर विधि करता रहता, चूर चूर आशाएं प्रतिक्षण।।

जयति! जयति! भारती!!

हिम-किरीट गंग-भाल, करधनी है बिंध्यजाल।
चरण चूमता महान, सिंधु हिंद का विशाल।।
सृष्टि निज विभा समस्त, समुद तुझ पे वारती।

जयति! जयति! भारती!!

उद्‌बोधन

जागो स्वतंत्र भारत महान, तुम मानवता के महामान।
कोटि कोटि कंठों में जग जाएं, स्वागत के मधुर गान।।
गुंजित है अर्चनमयी तान, जागो जागो भारत महान!!

बरमा (जन्म-भूमि प्रेम)

मेरे देश में जो भी होगा सहूंगा।
यहीं पर जिया हूं, यहीं पर मरूंगा।।
ये बरमा की धरती मुझे प्यार करती,
यहीं के हवा-जल से काया बनी है,
इसी से तो मैं भी 'मैं' बन सका हूं।।

कैसे दीपावली मनाएं?

कैसे झिलमिल दीप जलाएं?
कैसे दीपावली मनाएं?

खंडित भारत के खंडित उर से,
बह निकली शोणित की धारा।
अंधी दानवता ने कितने,
पीड़ित प्राणों को संहारा।।

तुम उनकी आहें क्या जानो?

भोली बाला को विधवा कह, भाग्य विधाता बन मनमाने।
तोड़ पेड़ की डाली-सी तुम, जिसे दूर फेंक दो मुरझाने।।
और स्वयं नव-नव वधुओं सँग, रँगरलियों के साज सजाते।
तब उनके कुचले यौवन से, हूक उठे वह तुम क्या जानो?
तुम उनकी आहें क्या जानो?

हिंदुस्तानी

जब कोई हिंदुस्तानी यह कहता है- 'मैं
हिंदुस्तानी कहलाने से शरमाता हूं।'
तो सच कहता हूं यह सुन कर मैं तो अपनी,
अंतरतम की पीड़ा की थाह न पाता हूं।।

धमाल (भारत म्हांरो रे)

सौ सौ सुरगां सै भी म्हांने भारत प्यारो रे।
भारत म्हांरो रे।।
राम अठै ही कृष्ण अठै ही बुद्ध अठै ही जनम्या रे।
बार बार परमेस्सर को भी जी ललचावै रे - कि भारत म्हांरो रे।।

बरमा में भी अनेक अवसरों पर सार्वजनिक समारोह होते तब इनका भाषण होता। इसलिए इनके अनेकों लेख वहां की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। लेखन कला विकसित होती गयी और कुछ एक पुस्तकें तो बरमा में ही छपीं। जून, १९६९ में भारत आने पर विपश्यना के प्रसारण में लगे तब साधकों की धर्म-संबंधी जिज्ञासा पूरी करने के लिए जुलाई १९७१ से मासिक पत्रिका 'विपश्यना' का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके बाद तो लेखों का सिलसिला आरंभ हो गया और धीरे-धीरे इनकी छोटी-बड़ी ६६ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। धर्म संबंधी दोहों की लगभग तीन-पौने तीन सौ पृष्ठों की हिंदी और राजस्थानी में दो अलग-अलग पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

इनके मार्गदर्शन से इगतपुरी में विपश्यना विशोधन विन्यास की स्थापना हुई। इस विन्यास ने न केवल पालि के लगभग ५२,६०२ पृष्ठों का विशाल साहित्य प्रकाशित किया बल्कि यह सैंकड़ों अन्य पुस्तकों का भी प्रकाशन कर चुका है। गुरुदेव की अनेक पुस्तकों का विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है और होते ही जा रहा है। इनके प्रवचनों की सीडी और डीवीडी भी सैंकड़ों की संख्या में उपलब्ध हैं। शिविर-प्रवचनों का तो विश्व की ५६ भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और उनके माध्यम से उन-उन भाषाओं में विपश्यना के शिविरों का संचालन होता है।

विश्वास है सुधी पाठक उनके वैयक्तिक जीवन के उतार-चढ़ाव, उनके द्वारा रचित कविताओं और लेखों के अतिरिक्त उनकी सिखायी हुई विपश्यना विद्या का अभ्यास करके सही माने में लाभान्वित होंगे।

प्रकाशक मंडल,
विपश्यना विशोधन विन्यास